श्रीनिवास बालभारती

श्रीरामचन्द्र

हिन्दी अनुवाद

डॉ. आर. सुमनलता

तिरुमल तिरुपति देवस्थानम्
तिरुपति

श्रीनिवास बालभारती - 174

श्रीरामचन्द्र

तेलुगु मूल

टी. नरसिंहाचार्युलु

हिन्दी अनुवाद

डॉ. आर. सुमनलता

तिरुमल तिरुपति देवस्थानम्
तिरुपति
2015

Srinivasa Bala Bharati - 174
(Children Series)

SRI RAMACHANDRA

Telugu Version
T. Narasimacharyulu

Hindi Translation
Dr. R . Sumanalatha

T.T.D. Religious Publications Series No. 1122
©All Rights Reserved

First Edition - 2015

Copies : 5000

Price :

Published by
Dr. D. SAMBASIVA RAO, I.A.S.,
Executive Officer,
Tirumala Tirupati Devasthanams,
Tirupati.

D.T.P:
Office of the Editor-in-Chief
T.T.D, Tirupati.

Printed at :
Tirumala Tirupati Devasthanams Press,
Tirupati.

दो शब्द

बच्चों का हृदय सुमनों की भांति निर्मल होता है। उत्तम कपूर से बढ़कर सुवासित उन के दिलों में बढिया संस्कार पैदा करना है। यदि उन में हम अच्छे संस्कार डालते हैं तो चिरकाल तक आदर्श जीवन बिताने के लिए सुस्थिर नींव पड जाती है। बचपन में संस्कार प्राप्त बच्चे भावी पीढियों के लिए समुचित मार्ग दर्शन कर सकते हैं। इसलिए हमारे इन होनहार बच्चों के लिए हमारी विरासत बने पौराणिक मूल्यों तथा इतिहास में निहित मानवता के मूल्यों का परिचय कराना अत्यंत आवश्यक है।

बिना लक्ष्य का जीवन निष्फल होता है। बच्चों को लक्ष्य की ओर प्रेरित कर उनके जीवन को सही मार्ग पर ले जाने की जिम्मेदारी बडों के ऊपर है। महान व्यक्तियों की आदर्शमय जीवनियों का परिचय करा कर उनमें प्रेरणा जगाने के उद्देश्य से 'श्रीनिवास बालभारती' का शुभारंभ किया गया है।

इस योजना का मुख्य लक्ष्य नैतिक मूल्यों के माधुर्य के बच्चों तथा सर्वत्र फैलाने का है। हमें यह जानकर अत्यंत आनंद हो रहा है कि बच्चे तथा परिवार के सभी लोग इन पुस्तकों का स्वागत कर रहे हैं। इससे तिरुमल तिरुपति देवस्थानम् का मुख्य उद्देश्य कुछ हद तक सफल हो रहा है।

'श्रीनिवास बालभारती' की योजना तैयार करके उत्तम पुस्तकों का प्रकाशन करवा कर कम कीमत पर सब को उपलब्ध कराने का प्रयास, करनेवाले प्रो.एस.बी. रघुनाथाचार्य अभिनंदनीय हैं।

इस प्रकाशन में सहयोग देनेवाले लेखकों तथा कलाकारों के प्रति मैं अपना धन्यवाद अर्पित करता हूँ।

कार्यकारी अधिकारी
तिरुमल तिरुपति देवस्थानम्, तिरुपति

प्राक्कथन

आज के बच्चे कल के नागरिक हैं। अगर वे बचपन में ही महोन्नत सज्जनों की जीवनियों के बारे में जानकारी लें, तो अपने भावी जीवन को उदात्त धरातल पर उज्ज्वल रूप से जीने के मौके को प्राप्त कर सकते हैं। उन महोन्नत सज्जनों के जीवन में घटित अनुभवों से हमारी भारतीय संस्कृति, जीवन में आचरणीय मूल धार्मिक सिद्धान्तों तथा नैतिक मूल्यों आदि को वे निश्चय ही सीख सकते हैं। आज की पाठशालाओं में इन विषयों को सिखाने की संभावना नहीं है।

उपरोक्त विषयों को ध्यान में रखकर तिरुमल तिरुपति देवस्थानम् के प्रचुरण विभाग ने डॉ.एस.बी. रघुनाथाचार्य के संपादन में स्थापित ''बाल भारती सीरीस'' के अन्तर्गत विविध लेखकों के द्वारा तेलुगु में रचित ऋषि-मुनियों व महोन्नत सज्जनों की जीवनियों से संबंधित लगभग १०० पुस्तिकाओं का प्रकाशन किया। इनका पाठकों ने समादर किया और इसी प्रोत्साहन से प्रेरित होकर अन्य भाषाओं में भी इन पुस्तिकाओं के प्रकाशन करने का निर्णय लिया गया। प्रारम्भिक तौर पर इनको अंग्रेजी व हिन्दी भाषाओं में प्रकाशित किया जा रहा है। इनके द्वारा बच्चे व जिज्ञासु पाठकों को अवश्य ही लाभ पहुँचेगा।

इन पुस्तिकाओं के प्रकाशन करने का उद्देश्य यही है कि बच्चे पढें और बडे लोग इनका अध्ययन कर, कहानियों के रूप में इनका वर्णन करें, तद्वारा बच्चों में सृजनात्मक शक्ति को बढा दें। फलस्वरूप बच्चों को अच्छे मार्ग पर चलने की प्रेरणा निश्चय ही बचपन में ही मिलेगी।

एडिटर-इन-चीफ
ति.ति.देवस्थानम्

स्वागत

श्रीनिवासदयोद्भूता बालानां स्फूर्तिदायिनी ।
भारती जयताल्लोके भारतीयगुणोज्ज्वला ।।

जब खण्डान्तरों में सभ्यता की बू तक नहीं थी तब भरतवर्ष अपनी सभ्यता, संस्कार,धर्म, नैतिकाचरण के लिए प्रसिद्ध हो गया था। जो इस पुण्य-भूमि पर जन्मता है वह धर्माचरण में स्थिर होकर अधर्म का सामना करता है और क्रमशः ईश्वराभिमुखी होकर यशोवान होता है। ऐसे महात्माओं के प्रभाव से हमारे जीवन इह-पर दोनों प्रकार लाभान्वित होते हैं। उनके आदर्शमय जीवनों से स्फूर्ति पाता है और समझता है कि मैं इस महान भारत का वारिस हूँ; परंपरागत इस संप्रदाय की रक्षा करना मेरा कर्तव्य है। ऐसी भावना से वह अपने देश की सेवा के लिए तैयार रहता है।

वास्तव में इस देश में कई धर्मात्मा, वीरपुरुष, वीरनारियाँ पैदा हुई उन्होंने संस्कृति की दृढ नींव डाली है। हमारा भाग्य यही है कि हमारी पैतृक-संपदा के रूप में उज्ज्वल इतिहास की परंपरा है। उनके आदर्शों के पालन करने से ही कोई विद्यावान-विज्ञानी बन सकता है। राष्ट्र के जीवन प्रवाह में वही विज्ञान अचल रहकर जीवन को सुशोभित करता रहता है। इसी सिलासले को आगे बढाने के लिए महात्माओं के जीवनियों को संक्षिप्त रूप में आपके सामने रखता हूँ।

हे भारत के भाग्यदाता बालक-आइए-स्फूर्ति पाइए

एस.बी. रघुनाथाचार्य
प्रधान संपादक

परिचय

उस राजकुमार का बस थोड़े से समय के पश्चात् युवराज के रूप में राजतिलक होनेवाला था। पूरा आयोजन संपन्न हो गया। पूरा प्रदेश आनंद और उत्साह से झूम रहा था। इतने में सबको चौंका देनेवाला समाचार मिला कि युवराज बननेवाला वह राजकुमार अपने भाई के लिए राज्य को छोड़कर १४ वर्षों के लिए वन की ओर प्रस्थान कर रहा है। जानते हैं क्यों? क्योंकि उसे अपने पिता के वचन को निभाना था। नियमानुसार राज्याधिकार देने की बात तो हुई, किन्तु उससे वंचित होना पड़ा। ऊपर से वन में रहने के आदेश मिले। ऐसे आदेशों का आदर करने वाले पुत्र, वह भी राजकुमार, हमें देखने में कितने मिलेंगे? शायद एक भी नहीं। इसी प्रकार से निष्कलंक वंश, अपने कारण कलंकित हो जाने के भय से उन्होंने पत्नी का परित्याग कर दिया था। विश्व के इतिहास में उनका स्थान अद्वितीय है। क्या ऐसे महान व्यक्ति का नाम जानते हैं? वे हैं कारण जन्म कहलाने वाले श्रीरामचन्द्र।

वे स्वयं परमात्मा थे। किन्तु हम सब के लिए मानव के रूप में जन्म लेकर, मानव के ही समान लौकिक जीवन बिताकर, महान आदर्शों को उन्होंने हमें प्रदान किया। एक वचन, एक बाण और एक ही पत्नी के आदर्श का पालन करने वाले उस महापुरुष का आचरण, हमारा आदर्श बनना चाहिए। तभी हम रामराज्य को प्राप्त कर सकते हैं। महान स्फूर्ति को प्रदान करनेवाली उस कहानी को एक बार पढ़ें।

- प्रधान संपादक

श्रीरामचन्द्र

अयोध्या, भारत देश के कोशल नामक प्रदेश की राजधानी है। ऊँचे-ऊँचे प्राकार, गहरे खंदक, सुन्दर उपवन और रमणीय सरोवर उस नगरी की नैसर्गिक शोभा को बढाने वाले स्वाभाविक आभूषण लगते हैं।

कोशल देश के राजा 'दशरथ' सूर्यवंशी थे। वे सत्यव्रती ही नहीं बल्कि अपनी प्रजा को सदा प्रसन्न रखने के लिए तत्पर रहते थे। धर्मात्मा दशरथ, अपनी प्रजा पर संतान के समान वात्सल्य बरसाते और प्रजा भी पिता के समान उनका आदर करती थी। कौसल्या, सुमित्रा और कैकेई राजा दशरथ की तीन पत्नियाँ थीं।

संतान की प्राप्ति अवश्य होगी :

समय बीतता गया। अपार संपत्ति और वैभव तो था। किन्तु संतान न होने के कारण राजा दशरथ बहुत चिन्तित थे। गृहस्थ के लिए संतान को पाना, एक वर माना जाता है। कहते हैं कि पुत्र प्राप्ति से ही नरक वास से मुक्ति मिलती है और सद्‌गति भी प्राप्त होती है। इसीलिए राजा दशरथ ने दृढ़ निश्चय के साथ अपने कुलगुरु वशिष्ठ महर्षि को आमंत्रित किया। उनका यथोचित आदर-सत्कार कर अपनी चिन्ता प्रकट की। राजा के हितैशी और कुलगुरु होने के नाते गुरु वशिष्ठ ने आश्वासन दिया कि - ''हे राजन! संतान प्राप्ति के लिए पुत्रकामेष्ठि नामक यज्ञ किया जाता है। तुम इसका निर्वाह करोगे तो तुम्हें भी अवश्य संतान की प्राप्ति होगी।''

जन्म :

संतान पाने की इच्छा से राजा दशरथ ने सरयू नदी के तट पर महर्षि ऋष्यश्रृंग की देख-रेख में शास्त्रों में कथित रीति के अनुसार इस

यज्ञ को संपन्न किया। यज्ञ की परिसमाप्ति पर यज्ञ पुरुष प्रकट हुए और उन्होंने राजा दशरथ के हाथों में खीर से भरे स्वर्ण पात्र को रखा। उनका आदेश था कि - ''खीर को तुम अपनी तीनों रानियों में वितरित करना!'' (बाँटना)

राजा दशरथ ने, उस खीर का आधा भाग अपनी पटरानी कौसल्या को दिया। बचे आधे भाग का आधा हिस्सा उन्होंने अपनी प्रिय पत्नी कैकेई तथा बचे आधे हिस्से को सुमित्रा में बाँट दिया। कैकेई ने अपने खीर का आधा हिस्सा फिर से सुमित्रा को दिया। यज्ञ प्रसाद के इस खीर के सेवन से तीनों रानियों ने गर्भ धारण किया। कौसल्या के गर्भ से सकल गुणों के खान, 'राम' का जन्म हुआ। कैकेई ने रामभक्त 'भरत' को जन्म दिया। सुमित्रा के गर्भ से 'लक्ष्मण' और 'शत्रुघ्न' नामक जुड़वे पुत्रों का जन्म हुआ। दिन-प्रतिदिन बढ़ते वे चारों दशरथनंदन, बालचन्द्र जैसे शोभायमान थे।

शिक्षा :

राम के साथ लक्ष्मण का और भरत के साथ शत्रुघ्न का स्नेह भाव था। राम-लक्ष्मण और भरत-शत्रुघ्न की बनी जोड़ियों को देखकर वृद्धावस्था में पहुँचे राजा दशरथ और उनकी तीनों पत्नियाँ अत्यधिक प्रसन्न थीं। यथा समय उन्होंने अपने चारों पुत्रों के जातक कर्म, नामकरण, मुंडन और यज्ञोपवीत आदि संस्कारों को संपन्न करवाया। सकल विद्याओं में पारंगत गुरुजन, इन बालकों को सुशिक्षित कर रहे थे। इन चारों बालकों, पर ''नम्रता से युक्त विद्या मन को छू लेती है'' की उक्ति सार्थक लग रही थी।

आगे खाई, पीछे कुआँ :

लोक कल्याण के संकल्प से, एक दिन मुनि विश्वामित्र, राजा दशरथ के पास आए।

राजा दशरथ ने मुनि का यथोचित आदर-सत्कार किया और विराजमान करवाकर पूछा - ''आपके आगमन का कारण बताएँ?'' विश्वामित्र ने कहा - 'मैं एक यज्ञ करनेवाला हूँ। राक्षसों से उस यज्ञ की रक्षा करने के लिए तुम्हारे पुत्रों को मेरे साथ भेजना।' दशरथ खिन्न हो गये, मुख पर उदासी छा गई। उन्हें अपने लाड़ले बेटों को भेजने की इच्छा नहीं हो रही थी। किन्तु मना भी नहीं कर सकते क्योंकि मुनि कुपित हो जाएंगे। वचनभंग करना इक्ष्वाकु वंश के लिए कलंक है, दशरथ के मन में दुविधा हो रही थी कि मैं क्या करूँ? अंत में अपने पुरोहित वशिष्ठ के आदेशानुसार उन्होंने राम-लक्ष्मण को विश्वामित्र के संग भेजा।

संदेह करने की आवश्यकता नहीं! संहार करो :

विश्वामित्र को अपना गुरु मानकर दोनों भाई उनके संग चल पड़े। उस राजर्षि ने दोनों राजकुमारों के मार्ग के थकान को मिटाने के लिए, और मनको आह्लादित करने के लिए ज्ञान-विज्ञान से युक्त कई आख्यानों को सुनाया। वे वन में पहुँचे। भूख और प्यास न लगने के लिए मुनि ने उन्हें 'बला' और 'अतिबला' नामक दो विद्यायें सिखायी। मायावियों पर भी विजय-प्राप्त कर सकने के लिए आवश्यक अस्त्रों से उन्हें अनुग्रहीत किया। वे उस घने जंगल से जा रहे थे, जहाँ ताटका नामक एक राक्षसी रहती थी। उसके दुष्कर्मों के साथ-साथ नरमांस भक्षण के बारे में भी मुनि ने राजकुमारों को विस्तार से सुनाया। इतने में ऊँचे स्वर में चीखती-

चिल्लाती, अपने मुख को गुफा जैसे खोलकर ताटका उन्हें मारने वहाँ पहुँची। मुनि ने आदेश दिया कि ''संसार को हानि पहुँचाने वाली इस राक्षसी को स्त्री समझकर छोड़ना नहीं, इसका वध करो।'' मुनि का आदेश पाते ही राम ने एक ही बाण से बिना किसी संकोच के ताटका का वध कर ड़ाला। पृथ्वी पर गिरी ताडका ने तड़प-तड़प कर अपने प्राणों को छोड़ा।

यज्ञ समाप्त हुआ :

राम-लक्ष्मण के साथ विश्वामित्र, अपनी यात्रा में आगे बढे और थोड़ी दूरी पर स्थित सिद्धाश्रम पहुँचे। अगले दिन मुनि विश्वामित्र ने यज्ञ करना आरंभ किया। राम और लक्ष्मण ने अपने धनुर्बाणों को धारण कर, निद्रा और भोजन को भी भूलकर दिन-रात यज्ञ की रक्षा में लगे रहे। पाँच दिन तक यज्ञ में कोई बाधा उत्पन्न नहीं हुई। छटे दिन ताटका के पुत्र सुबाहु और मारीच अपने साथी राक्षसों के साथ इस यज्ञ में बाधा डालने के लिए चले आए। उन्होंने पत्थरों के साथ-साथ रक्त और मांस के पिंड़ों को भी यज्ञ कुंड में बरसाया। मुनियों को पीड़ा पहुँचाई। तुरन्त राम ने अपने नुकीले बाण का प्रयोग कर मारीच को समुद्र में गिरा दिया और एक बाण से सुबाहु का वध कर डाला। इन दोनों असुर भाइयों की स्थिति को देख उनके साथी अवाक् रह गए। राम-लक्ष्मण के पराक्रम से भयभीत हुए राक्षसगण, वहाँ से भाग निकले। यथावत् यज्ञ की परिसमाप्ति हुई।

शिला स्त्री बन गई :

इतने में उन्हें सीता स्वयंवर का समाचार प्राप्त हुआ। विश्वामित्र को इच्छा हुई कि राम का विवाह सीता से संपन्न हो। अतः दोनों राजकुमारों

को साथ लेकर मुनि ने मिथिला की ओर प्रस्थान किया। मार्ग में गौतम मुनि का रमणीय आश्रम दिखा। तब तक शिला जैसी पड़ी अहल्या, श्रीराम के चरण रज के स्पर्श से प्रकट हुई। अपने निजरूप को पाकर अहल्या ने राम की स्तुति की। सौन्दर्य के प्रतीक कामदेव को भी विस्मृत कर सकने वाले ये दोनों सुन्दर राजकुमार मुनि के साथ राजधानी पहुँचे। रूप, गुण और प्रताप में असमान वे दोनों भाई देखने में शेर के बच्चे लग रहे थे। राम-लक्ष्मण की सुन्दरता दर्शकों के मन पर छा गई। स्वयंवर के कारण पूरी मिथिलापुरी में कोलाहल था।

शिव धनुष का भंग करना :

राजर्षि माने जाने वाले राजा जनक, मिथिला के राजा थे। उन्हें अपने पूर्वजों से शिवजी का महान धनुष प्राप्त हुआ। साधारण लोग तो धनुष को खींचने की बात दूर, उसे अपने हाथों से छूने की हिम्मत भी नहीं कर सकते। एक दिन, गेंद खेलती वहाँ पहुँची सीता को, अपने बाएं हाथ से बड़ी सरलता से उसने भारी धनुष को ऊपर उठाते हुए राजा जनक ने देखा। उन्होंने संकल्प कर लिया कि इस महान धनुष पर नार चढ़ाने में समर्थ वीर से ही मैं सीता का विवाह करूँगा। अतः उन्होंने स्वयंवर की घोषणा कर दी। सभा में उपस्थित राजकुमारों को संबोधित करते हुए राजा जनक ने कहा - 'हे वीरगण! इसे शिव धनुष कहते हैं। इसे उठा कर तोड़ सकनेवाले वीर के गले में सीता जयमाला डालेगी।' तुरन्त कुछ वीरों ने धनुष को उठाने की चेष्टा की किन्तु वे विफल ही रहे। मुनि विश्वामित्र का आशीर्वाद पाकर श्रीराम धनुष के निकट पहुँचे और उसे बड़ी सरलता से उठाया क्योंकि, ''आत्मबल के धनी लोग किसी भी कार्य में विफल नहीं होते।'' चूँकि धनुष बहुत पुराना था, अतः राम के हाथ में लेते ही वह टूट गया।

राजा जनक समेत वहाँ बैठे सभी लोग आश्चर्यचकित रह गए। सीता को भी आनंद और आश्चर्य हुआ। सीता ने श्रीराम के कण्ठ में हर्ष के साथ जयमाला पहनाई और लज्जा के मारे अपना सिर झुका लिया।

सीता-राम का विवाह :

राजा जनक ने राजा दशरथ को यह शुभ समाचार भेजा। राजा दशरथ असीम आनंद से पुलकित हो गए। अपनी पत्नियों को लेकर परिवार सहित गुरु वशिष्ठ के साथ मिथिलापुरी पहुँचे। शुभ मुहूर्त पर राजा जनक ने, सकलगुणों से युक्त श्रीराम के साथ गुणवती और सुन्दरता की मूर्ति सीता का विवाह संपन्न करवाया अपनी पुत्री ऊर्मिला का विवाह लक्ष्मण से और अपने भाई की पुत्रियाँ मांड़वी और श्रुतकीर्ति का विवाह भी क्रमशः भरत और शत्रुघ्न से बड़े धूमधाम से करवाया। इन चारों विवाहों के अवसर पर प्रशंसनीय बात यह थी कि मुनि विश्वामित्र ही दाता थे और वे ही प्रतिग्रहीता भी रहे।

दोनों एकाकार हुए :

राजा दशरथ, अपने पुत्र और पुत्रवधुओं के साथ सपरिवार अयोध्या के लिए निकले। मार्ग में परशुराम ने रघुराम को टोका कि तुमने मेरे गुरु के धनुष का भंग कर डाला। राजा दशरथ ने परशुराम से क्षमा याचना की कि मेरे पुत्र ने अनजान में जो किया उसे क्षमा करना। परशुराम का क्रोध-और बढता जा रहा था। कुपित परशुराम ने श्रीराम के बल की परीक्षा लेना चाहा। अपने धनुष को राम के हाथ में देते हुए उसे चढाकर खींचने का आग्रह किया। राघव ने भार्गवराम को नमन किया और बड़ी सरलता से उस धनुष को खींचा जिससे परशुराम की सारी शक्ति अनायास ही श्रीराम में लीन हो गई। प्रसन्न होकर परशुराम ने श्रीराम का अभिनंदन किया। उस विष्णु धनुष को राम को प्रदान कर वे, महेन्द्र

पर्वत पर तपस्या करने निकल पड़े। राजा दशरथ, राम का आलिंगन कर प्रमुदित हुए। अपना देश पहुँचकर राजा दशरथ सुख-संतोष के साथ दिन बिताने लगे।

राज्याभिषेक का संकल्प :

थोड़े दिनों के पश्चात् दशरथ के मन में विचार आया कि अब मैं वृद्ध हो गया हूँ। मेरे ज्येष्ठ पुत्र श्रीराम को राज्यभार सौंपकर मुझे विश्राम करना चाहिए। पिता को, अपने गुणी पुत्रों को अधिकार सौंपने में आनंद मिलता है। अतः एक दिन राजा दशरथ ने अपने सामंत राजा, प्रजा और मंत्रियों की एक बैठक बुलाई। उस भरी सभा में राजा दशरथ ने अपना निर्णय घोषित किया कि मैं राम का राज्याभिषेक करना चाहता हूँ। कुलगुरु वशिष्ठ के साथ-साथ सारी प्रजा ने भी हर्ष के साथ अपनी सहमति प्रकट की। श्रीराम के राज्याभिषेक की तैयारियाँ आरंभ हो गईं। राजा दशरथ ने कहा - ''हे पुत्र! राम! मैं अब वृद्ध हो गया हूँ। मेरा मन विचलित हो रहा है। कुछ अपशकुन गोचर हो रहे हैं। कल पुष्यमी नक्षत्र के साथ चंद्रमा का योग है। राज्याभिषेक के लिए उत्तम दिन होगा। मेरे इस प्रस्ताव पर सारी प्रजा ने अपनी सहमति प्रकट की। 'आलस्यादमृतं विषम्!' के अनुसार भरत दूर देश में होने पर भी कल हम तुम्हारे राज्याभिषेक को संपन्न करवाएंगे।''

अंतःपुर में जाकर श्रीराम ने यह समाचार सभी को सुनाया। सब लोग प्रसन्न हुए। कौसल्या ने राम को आशीर्वाद दिया।

मंथरा का षड़यंत्र :

कैकेई की दासी मंथरा के लिए तो यह बुरा समाचार था। स्वभाव से दुष्ट उस दासी ने कैकेई के मन में बुरे विचारों को बोया। उसने स्मरण

दिलाया कि राजा दशरथ ने तुम्हें पहले कभी दो वर दिए थे। जिन्हें आज तुम माँगना! कैकेई ने वैसे ही माँगा। फलस्वरूप भरत का राज्याभिषेक और राम को वनवास पर जाने का निर्णय लेना पड़ा। अचानक घटी यह घटना, राजा दशरथ के लिए असहनीय था और वे मूर्छित हो गए। रातभर राम का नाम लेते ही रहे। रात बीत गई।

दूसरे दिन प्रातःकाल ही, वशिष्ठ के आदेश पर सुमंत्र कैकेई के भवन में आए। वहाँ अचेत पड़े राजा को देख, सुमंत्र अवाक् रह गए। कैकेई ने सुमंत्र को आदेश दिया कि ''राम को मेरे पास भेजें!'' वहाँ से निकलकर उन्होंने वशिष्ठजी को सारी बात बताई और राम को कैकेई के पास भेजा।

अयोध्या छोड़कर जाऊँगा :

श्रीराम कैकेई के भवन में गए और पिता को प्रणाम किया। जानना चाहा कि मुझे यहाँ बुलाने का क्या कारण है? उस पर कैकेई ने बताया कि - ''राम! तुम्हारे पिताजी ने तुम्हें १४ वर्ष तक वनवास पर जाने और भरत का राज्याभिषेक करवाने के आदेश दिए। तुम उनकी आज्ञा का पालन करोगे तो उन्हें शान्ति मिलेगी। वरना हमारे वंश का नाम कलंकित होगा।'' तुरन्त राम ने विनम्रस्वर में कहा - ''पिता की आज्ञा का पालन करना ही पुत्रों का कर्तव्य है, अतः मैं पिताजी की आज्ञा का पालन करते हुए आज ही वन चला जाऊँगा। भरत को बुलवाकर उसका राज्याभिषेक करवाना।'' पिता के साथ कैकेई को भी नमन कर, वहाँ से राम निकल पड़े। दशरथ न अपने पुत्र को छोड़ सकते थे, और ना ही उससे कुछ बोल पा रहे थे। मौन ही रह गए।

वन ही अब तुम्हारे लिए अयोध्या है :

श्रीराम ने माता कौसल्या से सारी बात कही और वन जाने के लिए आज्ञा माँगी। लक्ष्मण ने राम का अनुगमन किया। ''मैं आपकी सहधर्मचारिणी होने के नाते आपके साथ चलना मेरा कर्तव्य है।'' कहती हुई सीता ने भी राम का अनुसरण किया। कौसल्या ने तीनों को अनुमति दी। नार के वल्कल धारण कर सन्नद्ध लक्ष्मण से सुमित्रा ने कहा - ''वत्स लक्ष्मण! आज से अग्रज राम तुम्हारे लिए पिता दशरथ हैं और सीता ही माता हैं। जिस कानन में तुम रहते हो उसी को अयोध्या मानना!''

केवट पर कृपा :

सुमंत्र ने रथ को तैयार किया। राम-लक्ष्मण सीता के साथ वन की ओर निकले, अयोध्या की दुःखी सारी प्रजा पँक्तियों में खड़ी थी। उनसे आज्ञा लेकर तीनों आगे बढ़े। तमसा नदी को पार कर गंगातट पर आए। वहाँ 'गुह' नाम के निषादराज का राज्य था। उसने दूध और फल लाकर दिया। राम ने उन्हें स्वीकारा और गुह को गले लगाया। राम से प्राप्त इस गौरव से गुह के आनंद की सीमा न रही। राम ने सुमंत्र को अयोध्या लौटने का आग्रह करते हुए कहा कि ''आप हमारे माता-पिता को हमारे कुशल-मंगल होने का समाचार सुनाकर उन्हें थोड़ी सी सांत्वना दीजिए।'' केवट बनकर गुह ने राम को गंगा नदी के उस पार पहुँचाया और उनकी दया का पात्र बना।

सीता, राम और लक्ष्मण चलते हुए भरद्वाज मुनि के आश्रम पहुँचे। भरद्वाज मुनि ने अपने आश्रम पर पधारे सीता, राम और लक्ष्मण का बड़े प्रेम से आदर सत्कार किया। उन्होंने बताया कि वन में वास योग्य प्रदेश पंचवटी नामक स्थान है। अतः वहाँ जाने का सुझाव दिया।

दशरथ की मृत्यु होगई :

अयोध्या में अचेत रहे राजा दशरथ की दशा अस्तव्यस्त थी। वापस आए सुमंत्र से उन्होंने प्रश्न किया - ''राम क्यों नहीं आया?'' सुमंत्र को मौन देखकर दशरथ पुनः मूर्छित हो गए। पुत्रशोक से अपने पुत्र राम का नाम बड़बड़ने लगे। उन्हें पहले कभी एक अंधे तापसी से दिए गए शाप का स्मरण आया। राम का नाम लेते-लेते उन्होंने अपने प्राण त्याग दिए। रानियाँ विलाप करने लगीं। प्रजा शोकाकुल हो गई। मंत्री गण को कर्तव्य सूझ नहीं रहा था। मृतक दशरथ के शरीर को उन्होंने तेल के घड़े में सुरक्षित रखा। तुरन्त उन्होंने भरत और शत्रुघ्न को वापस अयोध्या बुला भेजा। भरत को अयोध्या श्रीहीन लगी तो उसने अपनी माँ से इसका कारण पूछा। माता ने पूरी बात बताई। वशिष्ठ के रोकने के कारण कैकेई और मंथरा के प्राण बचे। वरना, भरत, उनका वध कर डालता। कौसल्या के चरणों पर पड़कर भरत ने बार-बार क्षमा की याचना की। राम के वनवास और पिता की मृत्यु पर भरत अत्यधिक दुःखी हुआ। पूरी भक्ति-श्रद्धा के साथ पिता दशरथ की अंत्येष्टी संपन्न करवायी गई।

पादुकाएँ प्रदान करें :

राम को अयोध्या वापस लाने के लिए पुरवासियों के साथ भरत वन के लिए निकला। सेना और परिवार के साथ वन में प्रवेश कर रहे भरत को देखकर लक्ष्मण को संदेह होने लगा। राम ने शान्त करते हुए कहा ''लक्ष्मण! तुम्हें सन्देह करने की कोई आवश्यकता नहीं। भरत केवल हमसे मिलने आ रहा है।'' राम के चरणों पर पड़ा भरत बिलखने लगा और अयोध्या लौटने का बार-बार अनुरोध करता गया। किन्तु राम ने मना कर दिया। अंत में भरत ने प्रार्थना की कि, ''कम से कम आप

मुझे अपनी पादुकाएँ (खड़ाऊँ) दीजिए।'' राम ने वैसे ही दिया। ''चौदह वर्ष बीत जाते ही अगर तुम अयोध्या वापस नहीं आए तो मैं अग्नि में प्रवेश करूँगा'' - भरत ने घोषणा की और घर के लिए चल पडा। नंदिग्राम नामक गाँव पहुँचा भरत, जटायें और वल्कल धारण कर पादुकाओं को सिंहासन पर आसीन करवाया। उन्हीं पादुकाओं का राज्याभिषेक कर, राज-काज को संभालते दिन बिताने लगा। राम के बिना भरत ने अयोध्या में प्रवेश नहीं किया।

सीता और लक्ष्मण के साथ पंचवटी की ओर अग्रसर हुए राम, महामुनि अत्रि के आश्रम पहुँचे। अत्रि ने सीता-लक्ष्मण समेत पहुँचे राम का आदर सत्कार किया। उनके कहने पर वे तीनों दण्डक वन पहुँचे।

दुर्जनों का संहार - सज्जनों की रक्षा :

दंडक वन, मुनियों के लिए ही नहीं, राक्षसों के लिए भी आश्रय था। जितना घना वन था, उतना मनोरम भी था। एक ओर बाघ, सिंह, अजगरों का संचार दिखता तो दूसरी ओर मृग, मोर और तोते भी वहाँ गोचर होते हैं। काक, गीध और उल्लुओं की आवाजें सुनाई पड़ती हैं। वहाँ झरने और सरिताएं बहती हैं। दंडक वन में राम ने मुनियों के दर्शन किए। उन्होंने राक्षसों से दी जा रही यातनाओं को सुनाया। राम ने अपने आगमन का कारण बताते हुए कहा कि, तुरन्त दुष्टों का अंत कर, सज्जनों की रक्षा करना ही मेरा कर्तव्य है। वादा किया कि असुरों का अंत कर डालूँगा।

विराध का पूर्वज्ञान :

मुनियों के आश्रमों से आगे बढ़ते जा रहे राम-लक्ष्मण को, विकृताकार का एक राक्षस दिखा। उसका स्वभाव कुछ विचित्र लग रहा था। उसने सीता को बगल में दबाकर उनसे पूछा - ''जटाएँ, वल्कल, धनुष, बाण

और खड्ग का धारण कर पत्नी के साथ इस घने वन में प्रवेश करने वाले तुम कौन हो? तुम्हारी आयु आज समाप्त हो जाएगी।'' कहते-कहते सीता को छोड़ उस आकार ने राम-लक्ष्मण को पकड़ लिया। तुरन्त राम ने उसकी भुजाओं को खंडित कर डाला, जिससे उसे पूर्व ज्ञान मिला। यह विराध एक तुंबुर था। साधु स्वभावी तुंबुर भक्त भी था। एक बार उसने रंभा की कामना की तो कुबेर ने उसे शाप दिया था। जिसके कारण उसे राक्षस बनना पड़ा। शाप से मुक्ति मिलने पर विराध ने राम को सुझाया कि ऋषि शरभंग के दर्शन करेंगे तो आपका भला होगा। उसके शरीर को एक गड्ढे में गाढ़ कर, तीनों शरभंग मुनि के आश्रम की ओर चले।

वहाँ उन्होंने मुनि के दर्शन कर, उनका आशीर्वाद पाया। उन्होंने अपना पूरा तपोबल राम को ही समर्पित कर अग्नि में प्रवेश कर लिया।

पंचवटी में प्रवेश :

वहाँ से वे अगस्त्य मुनि के आश्रम पहुँचे। उन्होंने राम को दिव्य धनुष और बाणों को दिया और उन्होंने गोदावरी तट पर स्थित पंचवटी को वास स्थान बनाने का आदेश दिया। मुनि के आदेशानुसार सीता, राम और लक्ष्मण चलकर पंचवटी पहुँचे।

पाँच वट वृक्षों से युक्त सुन्दर प्रदेश है पंचवटी। मार्ग पर उन्हें 'जटायु' नामक पक्षियों का राजा मिला, जो दशरथ का मित्र था। दशरथ की मृत्यु का समाचार सुनकर जटायु दुःखी हुआ। पंचवटी में लक्ष्मण ने सुन्दर पर्णकुटी बनाई। कंदमूलों का भक्षण कर गोदावरी जल का पान करते हुए राम-सीता और लक्ष्मण के साथ वहाँ की नैसर्गिक छटा का आनंद ले रहे थे। समय बीत रहा था।

कान और नाक को काट डाला :

हेमन्तऋतु चल रहा था। एक दिन लंकेश्वर रावण की बहन शूर्पणखा ने पंचवटी के परिसरों में संचार करते-करते अचानक सुन्दर कोमलाकार राम को देखा। कमल पंख जैसे नैन, चंद्रमा जैसी आँखें, घनश्याम जैसा शरीर और आजानुबाहु राम के विलक्षण सौन्दर्य से वह मोहित हो गई। उसने राम के पास जाकर विवाह करने की इच्छा प्रकट की। राम ने उत्तर दिया - ''मैं तो एकपत्नीव्रत का पालन करता हूँ। देखो, वहाँ मेरा अनुज लक्ष्मण अकेला है। जाकर उससे पूछो।'' लक्ष्मण के पास भी शूर्पणखा ने विवाह का प्रस्ताव रखा। कुपित लक्ष्मण ने उसे टाल कर राम के ही पास भेजा। एक बार और उसने राम के पास विवाह के बारे में प्रस्तावित किया, जिसे राम ने ठुकरा दिया। इस तिरस्कार से कुपित शूर्पणखा ने अपना मार्ग प्रशस्त करने के लिए सीता को निगलना चाहा। राम के इंगित (इशारे) पर लक्ष्मण ने शूर्पणखा के नाक और कान काट डाले।

खर दूषण का संहार :

चीखती - चिल्लाती शूर्पणखा ने खर, दूषण और त्रिशिरस्क नामक तीन राक्षसों को सारी बात बताई। खर को जब ज्ञात हुआ कि एक साधारण मनुष्य के कारण अपनी बहन अपमानित हुई है तो उसने चौदह हजार राक्षसों के समूह के साथ राम पर आक्रमण किया। लक्ष्मण को सीता की रक्षा करने के लिए छोड़, राम ने उन राक्षसों का सामना किया। खर दूषण और राम के बीच प्रचंड युद्ध हुआ। दूषण और त्रिशिरस्क नाम के वे दोनों सेनापति मर गए। राम बाणों से राक्षसों के सिर ताड़ के फल जैसे कट गए। खर के रथ को तोड़ दिया गया। खर ने गदा से राम को मारना चाहा। किन्तु रामबाण से उसकी मृत्यु हो गई।

उसके बिना तुम्हारा वैभव व्यर्थ है :

खर-दूषण के वध को देखकर शूर्पणखा ने अपने भाई के पास जाकर अपने विकृत रूप को दिखाया। साधारण मनुष्यों से हुए इस अपमान के बारे में बताया और खर दूषण के अंत की सूचना दी। सीता के सौन्दर्य का वर्णन कर, शूर्पणखा ने रावण को उकसाया कि 'उसके बिना तुम्हारा सारा वैभव निरर्थक है। तुम्हारी और उस सीता की जोड़ी सुन्दर बनेगी। उसे तुम्हें भेंट करने की चाह से जो प्रयास मैं ने किया, उसी का परिणाम मेरा यह विकृत रूप है।'

मना करने पर भी माना नहीं :

बहन का विकृत रूप और खरदूषण की मृत्यु से भी अधिक, सीता के सौन्दर्य से रावण के मन में खलबली मचने लगी। अपमान का प्रतिशोध लेने के लिए रावण ने मारीच को बुला भेजा। अभिवादन कर मारीच ने कारण पूछा तो रावण ने बताया - ''सुना है कि साधारण मानवों ने हमारे राक्षस प्रमुखों का संहार किया है। उनके साथ एक सुन्दर स्त्री भी है। उन मानवों का अंतकर, जब तक उस स्त्री का अपमान नहीं करेंगे, तब तक हमारी बहन की क्रोध की ज्वालाएं शान्त नहीं होंगी। इसके लिए तुम्हारे मायाजाल की आवश्यकता पड़ रही है।'' राम की वीरता से परिचित मारीच ने रावण को बहुत मना किया, किन्तु राजा होने के नाते उसकी आज्ञा का पालन करना पड़ा। रावण और मारीच ने राम-लक्ष्मण पर कुछ अलग ढंग से आक्रमण करने की योजना बनाई।

स्वर्ण मृग :

सीता, राम और लक्ष्मण अपनी पर्णकुटी के आगे बैठकर वार्तालाप कर रहे थे। थोड़ी दूरी पर उन्हें एक सोने का हिरण गोचर हुआ। उसके

शरीर पर काले धब्बे थे। वह यहाँ - वहाँ घास को चरते-चरते छलांग मार रहा था। उस सोने के हिरण को दिखाती हुई सीता ने राम से अनुरोध किया- ''नाथ देखिए! कितना सुन्दर दिख रहा है वह स्वर्ण मृग। मुझे लाकर दीजिए।'' लक्ष्मण ने कहा - ''यह एक मायाजाल लग रहा है। इससे पूर्व न हमने स्वर्ण मृग के बारे में सुना है और न उसे देखा है। लक्ष्मण के मना करने पर भी राम ने उस मृग को पकड़ना चाहा। आगे-आगे हिरण और उसका पीछा करते-करते राम। पता नहीं ऐसे कितनी दूर निकल गए। हिरण, राम के हाथ आते-आते, दूर भागता जा रहा था। अंत में राम ने उस पर बाण चलाया। उस माया मृग ने ''हा लक्ष्मणा! हा सीता! हतोस्मि! हतोस्मि!'' कहते हुए राम के स्वर में पुकारा। अपना माया मृग का रूप छोड़कर मारीच पृथवी पर गिर पड़ा। उसके आर्तनाद को सुनकर सीता ने राम की सहायता करने के लिए लक्ष्मण से जाने को कहा। लक्ष्मण ने बहुत समझाने का प्रयत्न किया कि यह तो राक्षसों की माया है। किन्तु सीता ने लक्ष्मण से जाने के लिए हठ किया, लक्ष्मण उदास होकर राम के लिए उस ओर निकल पड़ा, जहाँ से आर्तनाद आया।

सीता हरण :

साधु के वेष में प्रकट हुए रावण ने सीता से 'भवती भिक्षां देही' कहते हुए भिक्षा मांगी। सीता की सुरक्षा के लिए लक्ष्मण ने एक रेखा खींची थी। रावण को भिक्षा देने सीता उसे पार कर आई। तब रावण ने सीता को बलात् उठाकर, वहीं पर रखे उसके रथ में बिठा दिया। वह रथ वायुयान (विमान) जैसे उड़ सकता था। सीता ने उसका विरोध किया तो रावण ने सीता को अपने बीस हाथ और दस सिरों से प्रकट होकर उसे

डरा धमकाया। रोती-कलपती सीता हाहाकार करते हुए ऊँचे स्वर में गुहारने लगी - 'मैं महाराज दशरथ की पुत्रवधु (बहू) हूँ, श्रीरामचन्द्र की पत्नी हूँ। कोई मायावी मुझे बलात् उठाकर ले जा रहा है। मेरी रक्षा करें।' उस आर्तनाद को सुनकर दशरथ के मित्र जटायु ने अपने वज्र जैसे कठिन चोंच से और नखूनों से चीरते हुए, अपने पंखों से रथ को रोकना चाहा। उसने रावण के साथ भयंकर युद्ध किया। तुरन्त रावण ने जटायु के परों को काट डाला। उन्हें रोकने के प्रयास में जटायु असफल रहा। सीता को कुछ भी नहीं सूझा। इसलिए उन्होंने अपने आँचल को फाड़कर उसमें अपने गहनों को डाला। उस गठरी को रथ से फेंका, जो एक पर्वत पर जा गिरा, जहाँ कुछ वानर रहते हैं। उन्होंने उस गठरी को सुरक्षित रखा और अपने नायक के हाथ में सौंप दिया। रावण का रथ लंकापुरी पहुँचा। रावण ने सीता को अशोक वाटिका में कड़ी पहरेदारी में रखा। सेवकों को नियमित किया। सीता का मन अपनी ओर मोड़ने के लिए यत्न किए जाने लगे।

राम के दुःख की सीमा नहीं :

उस माया मृग की चीख को सुने राम, कुछ असमंजस में पड़ गए। पर्णकुटी की ओर लौट रहे राम को, सामने से आ रहे लक्ष्मण को देखकर बहुत आश्चर्य हुआ और पूछा - ''भाभी को अकेली छोड़कर तुम क्यों आ रहे हो?'' लक्ष्मण ने उत्तर दिया, ''भाभी के आदेशानुसार ही मैं आपकी सहायता करने आ रहा हूँ।'' दोनों भाई त्वरित गति से पर्णकुटी पहुँचे तो वहाँ सीता नहीं दिखी। ''सीता-सीता'' पुकारते हुए उन्होंने उस प्रदेश को छान मारा। कहीं सीता नहीं दिखी। चप्पा-चप्पा ढूँढते फिरे। राम के दुःख की सीमा नहीं रही। कुछ सूझा नहीं। लक्ष्मण ने राम को सांत्वना दी। इतने में उन्हें कटे परों से पड़ा जटायु दिखा और

उसने सारी घटना सुनाई। उसकी मृत्यु हो गई। अपने पिता के मित्र का दहन संस्कार कर, राम, सीता के अन्वेषण में वहाँ से चले।

सीता को पा सकते हैं :

मार्ग पर राम-लक्ष्मण को एक विकृताकार दिखा। उसकी आँखें, नाक, कान और हाथ अपने-अपने स्थानों पर नहीं थे। दोनों भाइयों को अपने लंबे हाथों से पकड़कर भक्षण करने के लिए उस विकृताकार ने अपनी ओर खींचा। दोनों भाइयों ने उसके दोनों हाथों को खंडित कर डाला। वह आकार पृथ्वी पर ढेर हो गया। उस कलेवर से एक सुन्दर गंधर्व प्रकट हुआ। उसने बताया कि एक सिद्ध के शाप के कारण मुझे यह विकृत रूप प्राप्त हुआ। मुझे कबंध कहते हैं। आप जैसे पुण्यात्माओं के दर्शन के कारण मैं शाप से मुक्त हुआ। इसके बदले मैं आपको एक उपाय बताऊंगा। पंपा नदी के किनारे सुग्रीव नामक एक वानर राजा है। अगर आप उससे मित्रता करेंगे तो आप सीता को वापस पा सकते हैं।

क्या आप ही राम और लक्ष्मण हैं ?

राम और लक्ष्मण उस मार्ग पर अग्रसर होते गए। उन्हें वहाँ छोटी सी कुटिया दिखी। उसमें उन्होंने एक वृद्धा को देखा, जिसका कमर झुक गया था। इन्हें देखते ही, ''क्या आप ही राम और लक्ष्मण हैं?'' वृद्धा ने प्रश्न किया। दोनों भाइयों को आश्चर्य हुआ कि आप हमारे नाम कैसे जानती हैं। उस वृद्धा ने हर्ष के साथ उत्तर दिया मेरा नाम शबरी है। मेरे गुरु शरभंग महर्षि ने मुझे आदेश दिया था कि राम-लक्ष्मण यहाँ पधारेंगे, उनको आतिथ्य देना! इसके पश्चात् आपका आगमन हुआ है। उन्होंने कुछ समय पूर्व ही सिद्धि प्राप्त की। इसीलिए मैं ने अनुमान लगाया कि आप ही राम और लक्ष्मण हो सकते हैं।''

उन दोनों भाइयों ने 'हाँ' कहा। कांपते हाथों से शबरी ने कुछ फलों को उनके समक्ष रखा। केवल मधुर फलों को ही राम-लक्ष्मण को खिलाने के संकल्प से शबरी पहले स्वयं उनका स्वाद देखती। ''भर पेट खाने'' का आग्रह कर रही थी ।भक्ति, प्रेम और विनम्रता से भाव-विभोर हो रही शबरी भूल गई कि मैं इन्हें अपना जूठन खिला रही हूँ। बड़े प्यार से दिए उन फलों को राम-लक्ष्मण ने भी उतने ही प्यार से आरोगा। शबरी ने केवल उनकी दया की याचना की। राम ने कहा - ''तुम्हारे गुरु के आदेशानुसार मैंने तुम्हें अनुग्रहीत किया।'' शबरी ने हाथ जोड़कर उनसे आज्ञा मांगी और उसे मुक्ति मिली। राम और लक्ष्मण अपने पथ पर अग्रसर हुए।

इनके बारे में पता करो :

राम अपने अनुज लक्ष्मण के साथ सीता को ढूँढते-ढूँढते ऋष्यमूक पर्वत के पास पहुँचे। समीपस्थ किष्किन्धा नगरी के महान् बलशाली राजा वालि थे। उनका भाई सुग्रीव था, जिसकी पत्नी को वालि ने बलात् अपनी पत्नी बनाकर, अपने भाई को राज्य से निकाल दिया था। उसने इस ऋष्यमूक पर्वत को अपना वास स्थान बनाया था, जहाँ वालि मुनियों के शाप के कारण प्रवेश नहीं कर सकता। धनुष और बाणों को धारण कर आ रहे राम-लक्ष्मण को देख सुग्रीव ने सोचा कि कहीं मेरा भाई, मेरा वध-करने के लिए इन्हें भेज तो नहीं रहा है। अपने मंत्री हनुमानजी को इन दोनों के बारे में जानकारी लेने के लिए सुग्रीव ने भेजा।

सुग्रीव से मित्रता :

हनुमानजी एक विश्वसनीय गुप्तचर थे। इसीलिए एक वृद्ध ब्राह्मण के रूप में राम लक्ष्मण के समीप गए और उनका परिचय पूछा। राम ने उत्तर दिया - ''हम अयोध्या नगरी के राजकुमार हैं। हमें राम और

लक्ष्मण कहते हैं। पिताजी के आदेशानुसार हम वनों में वास करते हुए दुर्जनों का संहार और सज्जनों की रक्षा कर रहे हैं। इतने में किसी मायावी से मेरी पत्नी सीता का अपहरण हो गया। उसी को ढूँढते-ढूँढते हम यहाँ आए हैं।'' हनुमानजी ने कहा - ''हे महानुभाव! चिन्ता करने की आवश्यकता नहीं। मेरे साथ आइए। इस पर्वत पर सुग्रीव नामक वानर राजा वास करते हैं। वे भी आपके समान दुःख झेल रहे हैं। सदाचारी राजा सुग्रीव से आपकी मैत्री, आप दोनों के लिए मंगलकारी बनेगी।'' इन वचनों को सुनकर संतुष्ट हुए राम, सुग्रीव से मित्रता करने आगे बढे।

सीता का पता लगवाऊँगा :

ऋष्यमूक पर्वत पर हनुमानजी के साथ आए दोनों भाइयों का स्वागत कर सुग्रीव ने उन्हें अपने सिंहासन पर बिठाया। राम और सुग्रीव ने एक दूसरे के साथ अपने-अपने दुःख को बाँटा। इतने में सुग्रीव को आभूषणों की गठरी के बारे में स्मरण आया। उन्हें मंगवाया और राम के सामने गठरी खोलकर सुग्रीव ने राम से पहचानने के लिए कहा। उन आभूषणों को देखते ही राम की आँखों से आँसू बहने लगे। अपने भाई से उन्हें पहचानने के लिए कहा। लक्ष्मण ने कहा कि, ''मैं प्रतिदिन भाभी जी के चरणों की वंदना करता हूँ अतः मैं केवल उनके नूपुर और बिच्छुओं को पहचान सकता हूँ। ये हमारी भाभी की हैं'', ''अगर ये आप के आभूषण हैं तो दक्षिण दिशा की ओर जाएंगे तो सीता अवश्य प्राप्त होंगी। मुझे अपना राज्य प्राप्त होते ही यथाशीघ्र मैं अपने सेवकों को सीता को ढूँढने में लगा दूँगा। किन्तु स्मरण रहे कि मेरा भाई वालि अत्यन्त बलशाली है। मैं कैसे मान सकता हूँ कि आप में उनसे युद्ध कर सकने की क्षमता है या नहीं। एक ही बाण से एक साथ ताड़ के तीन

वृक्षों को गिरा सकता है।'' सुग्रीव ने संदेह प्रकट किया लक्ष्मण ने आश्वासन दिया कि मेरा भाई राम सात ताड़ों को गिरा सकता है। राम ने सात ताडवृक्षों को एक ही तीर से गिराया। अपने बल प्रदर्शन के लिए राम ने दुंदुभी नामक राक्षस के कलेबर को अपने बाएं पैर की उंगली से अनायास ही हवा में उड़ा दिया! इस प्रदर्शन से सुग्रीव को राम के बल पर विश्वास हुआ। ''एक ही प्रकार के व्यसन और एक ही आयु के व्यक्तियों में मित्रता होती है'' की उक्ति इन पर सार्थक होती है। राम ने प्रतिज्ञा की ''वालि का वध कर मैं सुग्रीव का राज्याभिषेक करूँगा।''

मुझे अच्छा सबक मिला :

दूसरे दिन राम के भरोसे पर सुग्रीव ने वालि को युद्ध के लिए ललकारा। वालि सूर्य का पुत्र था और सुग्रीव इन्द्रका। दोनों एक दूसरे से कम नहीं। अपनी गदाओं से एक दूसरे पर प्रहार करने लगे। बलशाली होने के कारण वे दोनों भाई जीवित रहे। उनके स्थान पर अन्य कोई होता तो रक्त वमन (खूनकी उल्टियाँ) कर मर जाते। इसीलिए 'चाहे विवाह हो अथवा युद्ध, समान लोगों के बीच होना चाहिए', यहाँ सही लग रही थी। अंत में सुग्रीव अपने भाई वालि के प्रहारों को और सह नहीं सका। राम से सहायता भी नहीं मिली। किसी प्रकार से बचकर भाग निकला और उसने राम से कहा - ''आप की सहायता माँगना मेरी बहुत बड़ी भूल है। मुझे ऐसा पाठ मिलना ही चाहिए था।''

यह राजधर्म है :

सुग्रीव के शब्द राम को काँटे जैसे चुभने लगे। राम ने कहा ''तुम दोनों एक जैसे दिख रहे थे, अतः मैं तुम्हें पहचान नहीं पाया। अब की बार मैं तुम्हारे गले में पुष्पहार पहनाऊँगा, जिससे मैं तुम्हें पहचान

पाऊँगा। तब वालि का संहार करना आसान होगा।'' सुग्रीव के गले में हार पहनाकर युद्ध करने, दुबारा भेजा गया। तारा के साथ-साथ मंत्रियों ने भी मना किया। वालि ने उनकी अनसुनी कर दी। युद्ध के आरंभ होते ही, वृक्ष की आड़ से राम ने बाण छोड़ा, जो सीधा वालि के वक्षस्थल को भेदा। बस, वालि पृथ्वी पर गिरा।

समीप आए राम से वालि ने नमस्कार करते हुए कहा - 'हम भाइयों के बीच हो रहे युद्ध में, आड़ से मुझे मारना क्षात्र धर्म नहीं कहलाता। मेरे शरीर से इस बाण को निकालकर मुझे मुक्ति प्रदान करो।' राम ने समझाया - 'छोटे भाई की पत्नी का अपहरण कर, तुमने बहुत बड़ा अपराध किया है। अपराधियों को दण्ड देना राजधर्म है। मरते-मरते वालि ने अपने बेटे अंगद को राम को सोंपा। राम ने सुग्रीव से अपने भाई का यथोचित अंतिम संस्कार करवाया।

सिर काटना ही दण्ड़ है :

सुग्रीव को राम ने किष्किन्धा राज्य के राजा के रूप में राजतिलक करवाया। अपनी पत्नी रुमा के साथ राजा सुग्रीव भोग-विलासों में लिप्त रह गया। राम को दिया गया वचन भूल गया। वर्ष ऋतु बीत कर शरत् ऋतु का आगमन हुआ। राम की विरह व्यथा बढ़ती गई। सीता को ढूँढने में हो रहे विलंब को देख, लक्ष्मण अत्यधिक क्रोधित हुआ। अंगद के माध्यम से सुग्रीव को स्मरण दिलाया। हनुमानजी ने भी सुग्रीव को चेतावनी दी। सुग्रीव ने लक्ष्मण का अभिवादन किया, और अपनी सेना को चार भागों में विभाजित कर, सीता का अन्वेषण करने चारों दिशाओं में भेजा। अपनी सेना को संबोधित करते हुए सुग्रीव ने चेतावनी दी - ''सीता को एक माह के अंदर ढूँढकर, समाचार हमें देना होगा। वरना सिर काट दिया जाएगा।'' हनुमान, जांबवान, अंगद, नील आदि वानर

प्रमुख दक्षिण दिशा की ओर निकल पड़े। राम ने हनुमानजी के हाथ में अपने नाम की मुद्रिका दी, जिसे सीता को विश्वास दिलाने के लिए दिखाया जा सके। सारे वानर वहाँ का चप्पा-चप्पा छानने लगे। सीता के बारे में कुछ पता नहीं चला तो थोड़ी देर हताश होकर बैठे रहे। राम की भक्तन स्वयंप्रभा, इन्हें राम के दूत जानकर, अपनी गुफा में ले गई। मधु और मधुर फल देकर उनका अतिथि सत्कार किया। अपनी शक्ति से उन्हें गुफा के बाहर छोड़ दिया। समय बीतता जा रहा है। अवधि बहुत कम। सीता का कोई पता नहीं। हताश वानरों ने सामूहिक रूप से आत्माहुति कर लेना चाहा।

लंका में हनुमानजी :

वानरों से प्रोत्साहित होकर, हनुमानजी ने समुद्र को लांघा। लंका की रक्षा करने वाली लंकिणी को अपने वश में लाकर, लंका में प्रवेश कर लिया जो त्रिकूट पर्वत पर बसी सुन्दर नगरी है। पर्वतों पर आवास करनेवाले हनुमानजी ने वहाँ के पहरेदारों की आँखों में धूल झोंककर, एक वृक्ष पर चढ़कर बैठे। पत्रों में, पुष्पों में अपने आपको छिपा लिया। आधी रात के अंधियारे में रावण के भवन में पहुँचे। उस सुन्दर भवन को देखते-देखते प्रसन्न हुए। धीमी गति से पूरे भवन को छान मारा। यहाँ तक कि शयन कक्षों को भी ढूँढ-ढूँढकर हनुमानजी थक गए। उन्होंने निश्चय कर लिया कि सीता जैसी पतिव्रता नारी ऐसे दुष्ट राक्षस के सुन्दर भवनों में कभी वास नहीं करेंगी ।

मैं राम का दूत हूँ :

प्रभात के समय भेरियाँ बज रही थीं। हनुमान जी को भूख लगी तो फलों के लिए ढूँढने लगे। सुन्दर अशोक वन दिखा। एक वृक्ष पर बैठकर

वे भरपेट फल खाए। उस वृक्ष के नीचे उन्होंने एक स्त्री को देखा जिसकी साड़ी मैली थी और केश खुले थे। साक्षात् शोक की मूर्ति लग रही थी। राक्षस स्त्रियाँ उनके चारों ओर बैठकर कुछ समझाने का प्रयास कर रही थीं। हनुमानजी को लगा कि वे ही सीता हैं। सारी राक्षस स्त्रियाँ जब यहाँ-वहाँ निकल गईं तो उन्होंने राम की मुद्रिका को धीरे से सीता के समक्ष डाला। सीता ने तुरन्त पहचाना कि यह तो राम की अंगूठी है। प्रेम और दुःख से सीता का मन द्रवित हो गया। इतने में हनुमानजी वृक्ष से उतर कर सीता के समक्ष प्रकट हुए। अभिवादन कर बड़ी नम्रता से अपना परिचय दिया कि - 'माते! मैं श्रीरामचन्द्रजी का दूत हूँ। उन्होंने आपको अपनी यह मुद्रिका देने का आदेश दिया है। शीघ्र ही वे आकर आपको मुक्त कर देंगे। रावण का संहार कर लोक कल्याण भी करेंगे। आप भी अपनी ओर से कुछ कहना चाहेंगी तो मैं श्रीराम के पास आपका संदेश पहुँचाऊंगा।' सीता ने अपने केशों में छिपाकर रखे, प्रकाशमान शिरोमणि को हनुमानजी के हाथों में दिया। हनुमानजी अशोकवन से बाहर निकले। उनके मस्तिष्क में एक विचार उठा। दूसरों के बल को जानना और अपने बल को दिखाना उचित है। उन्हें 'जैसे आए वैसे गए' वाली बात ठीक नहीं लगी।

उस बन्दर को पकड़ो :

हनुमानजी ने कुछ वृक्षों को उखाड़ डाला। फलों को गिरा दिया। शाखाओं को काट डाला। रोकने आए राक्षसों को पछाड़ दिया। कुछ सैनिकों ने उन्हें पकड़ना चाहा तो उन्हें मार भगा दिया। रावण को ज्ञात हुआ कि अशोकवन को किसी वानर ने ध्वस्त कर डाला। अपने सुन्दर अशोक वन को उजाड़ने वाले पर उसे बड़ा क्रोध आया। अपने छोटे बेटे

अक्षकुमार को, 'उस बन्दर को पकड़कर लाने' का आदेश दिया। हनुमानजी ने ताड़ के एक वृक्ष को उखाड़ कर अक्षकुमार की ऐसी पिटायी की कि वह मर गया। बची सेना भाग निकली। हनुमानजी को बंदी बनाने के लिए अब की बार मेघनाथ नामक अपने बड़े पुत्र को रावण ने सेना के साथ भेजा। युद्ध कला में वह निपुण था और महान बलशाली और बड़ा हठी भी था। अपने धनुष और बाणों के साथ अशोक वन पहुँचा। हनुमानजी मेघनाथ से कुछ कम बलशाली नहीं थे। दोनों एक दूसरे से कम नहीं थे। इस समय हनुमानजी उससे युद्ध करना नहीं चाह रहे थे। ताड़ के एक वृक्ष को उखाड़कर सामने खड़े हुए। मेघनाथ ने ब्रह्मास्त्र से उन्हें बन्दी बना दिया। काल के प्रभाव से हनुमानजी बन्दी हो गए। मेघनाथ के अनुचारों ने लताओं से हनुमानजी के हाथ-पैर बाँधकर, मारते-पीटते रावण के समक्ष प्रस्तुत किया। यहाँ तक आते-आते ब्रह्मास्त्र का प्रभाव भी क्षीण पड़ता गया।

लंका दाह

जब रावण ने हनुमानजी का अंत करना चाहा तो विभीषण ने टोका। उन्हें पता चला कि यह वानर, सीता को ढूँढने आया दूत है और सुग्रीव का सेवक है। विभीषण ने रावण को समझाया कि दूत का वध नहीं करना चाहिए। रावण ने उसे दण्ड़ देना चाहा। वानर अग्नि से भयभीत हो जाते हैं। अतः अपने सैनिकों को आदेश दिया कि 'इस बंदर की पूँछ को कपड़ों से लपेट कर तेल डालना और उसमें आग लगा देना।' तुरन्त रावण के सैनिकों ने उस आज्ञा का यथावत् पालन किया। सीता को इसकी जानकारी हुई तो उन्होंने अग्नि देवता से प्रार्थना की कि हनुमानजी को किसी भी प्रकार की क्षति न पहुँचे। हनुमानजी को अग्नि से किसी भी प्रकार की हानि नहीं पहुँची। अपनी पूँछ में लगी आग से

सारे घरों को हनुमानजी ने जला ड़ाला। हर गली और वीथियों में घर जलते गए और अग्नि की ज्वालायें अंतःपुर तक फैल गईं। सारी लंका नगरी भस्म हो गई। हनुमानजी ने केवल विभीषण के घर को पहचानकर उसे छोड़ दिया। सीता माता से आज्ञा लेकर समुद्र में पूँछ में लगी आग को बुझाया। फिर से उस महासागर को लांघकर हनुमानजी महेन्द्रपर्वत पर पहुँचे। सीता माता के बारे में बताया और लंकादाह की घटना सुनाकर अपने साथियों को प्रसन्न किया।

सीता माता को देखा :

श्रीराम के समक्ष जाकर हनुमानजी ने, 'मैंने सीता माता के दर्शन किए' कहते हुए उनकी शिरोमणि को राम के हाथों में रखा। श्रीराम ने हनुमानजी को बड़े प्यार से आलिंगन किया। हनुमानजी ने लंका में घटी सारी घटनाओं को सुनाया। शिरोमणि को देखकर राम भावुक हो गए। सीता को छुड़ाने वे सुग्रीव की सेना को लेकर एक शुभ घड़ी में लंका पर आक्रमण करने निकले।

कितना बड़ा अपमान है :

सुग्रीव अपनी पूरी सेना को लेकर राम लक्ष्मण के साथ समुद्र के किनारे आ पहुँचा। रावण के चरों ने आकर उस सेना का परिमाण और शक्ति का आकलन कर, रावण को जानकारी दी। रावण ने अपने मंत्रियों को संबोधित किया - ''दो-चार दिन पूर्व, एक बन्दर ने आकर सारी लंका को कैसे तितर-बितर कर दिया था यहाँ के सारे लोगों को स्मरण है। आज बड़ी संख्या में वानरों को लेकर राम, युद्ध करने के लिए उस पार खड़ा है। अब हमें क्या करना चाहिए?'' मंत्रियों ने इसके उत्तर में डींग मारते हुए कहा - ''हे राजन्! उस दिन केवल हमारी उदासीनता के

कारण वह अनर्थ हुआ था। तीनों लोकों को चुटकी भर में अपने वश में ला सकने वाले आप हैं। समर्थ और बलशाली हम सब भी आपके साथ हैं। यह सोचना ही हमारे लिए अपमानजनक है कि नर और वानर हमारा सामना करेंगे अथवा हमें चुनौती देंगे।''

विभीषण की हितोक्ति :

रावण के अनुज विभीषण ने अपने बड़े भाई का अभिवादन करते हुए कहा - ''हमारी बहन शूर्पणखा ने पहली गलती की। उसकी बातों में आकर तुमने जो अकृत्य किया है वह दूसरी गलती है, जिस पर सारा संसार घृणा करता है। दूत की पूँछ में आग लगाना तीसरी गलती है।'' हमारी इन भूलों के ही कारण आज हमारे सामने विपदा आ खड़ी है। 'अब पछताए होत क्या जब चिड़िया चुग गई खेत।' अब भी समय है। इन चाटुकार मंत्रियों की बातों में आकर विपदा को और न बढाना। मैं तुम्हारा हितैषी हूँ। मेरी बात मानो। मार्गभ्रष्ट करनेवाले कई लोग मिल जाते हैं। किन्तु सही मंत्रणा देने वाले कम रहते हैं। श्रीराम कोई साधारण व्यक्ति नहीं है। सभी के लिए वे आदरणीय हैं। शिवजी के जिस धनुष को तुम उठा नहीं पाए थे, उसे उन्होंने उठा कर तोड़ भी दिया था। तुम्हारी भुजाओं पर प्रहार कर कारावास में रखनेवाले कार्तवीर्यार्जुन के सहस्त्र बाहुओं का खंडन कर चुके बलशाली परशुराम को उन्होंने बड़ी सरलता से हराया था। तुम्हें अपनी पूँछ से समेट कर, सात समुद्रों में डुबो-डुबो कर अंत में एक कीड़े के समान फेंकनेवाले बलशाली वालि को श्रीराम ने केवल एक ही बाण से अन्त कर डाला। ऐसे महान बलशाली श्रीराम का सामना करने का विचार छोड़ दो। उनके समक्ष जाकर जगत की जननी सीता माता को समर्पित कर, उनकी शरण में जाओ। वे तुम्हें क्षमा कर देंगे क्योंकि क्षमा करना उनका स्वभाव है। उन्हें 'शरणागतत्राणपरायण' कहा जाता है। इस हितोक्ति से कुपित रावण ने अपने छोटे भाई विभीषण के छाती पर पैर से मारते हुए अपनी सभा से बाहर कर दिया।

अयोध्या का शासक बनाऊंगा :

वहाँ से अपने साथी मंत्रियों के साथ प्रस्थान करते हुए विभीषण ने रावण से कहा - ''जब राम के बाण तुम्हारे वक्षःस्थल पर प्रहार करेंगे, तब तुम्हें मेरे वचनों का मूल्य पता चलेगा, अभी पहचान नहीं पा रहे हो।'' अपने विश्वसनीय साथियों के साथ वह समुद्र के तटपर विराजमान राम के पास जाकर, ''मैं आपकी शरण में आया हूँ। मेरी रक्षा करें!'' की प्रार्थना की। सुग्रीव को विश्वास नहीं हुआ। उसे लगा कि इसमें अवश्य कुछ छल है। तब हनुमानजी ने स्पष्ट किया कि - इसमें कोई छल नहीं है। लंका में जब रावण ने मुझे मारना चाहा तब, इसी विभीषण ने टोका था। राम ने कहा - ''यह चाहे शत्रु हो अथवा मित्र! शरण में आनेवालों को छोड़ना उचित नहीं समझा जाता। हे विभीषण! तुमने मुझसे शरण माँगी। मैं तुम्हें अवश्य पनाह दूँगा। भाई लक्ष्मण, तुम लंका राज्य में इसका राज्याभिषेक करो।'' राम से दिए गए इस आदेश को सुन सुग्रीव ने संदेह प्रकट किया ''हे राम आप विभीषण के राज्याभिषेक का आदेश दे रहे हैं। मान लीजिए इसके बाद स्वयं रावण आपकी शरण में आए तो आप उसे कहाँ के राजा बनाएंगे?'' सुग्रीव के इस प्रश्न का उत्तर राम ने बड़े शान्त स्वर में दिया ''अगर वैसा संयोग हो तो मैं उसे अयोध्या का राजा बनाकर उसका राजतिलक करूंगा।''

यहाँ सेतु निर्माण हो :

राम सागर के तट पर तीन दिन और तीन रात तक प्रायोपवेश करते रहे। किन्तु समुद्र प्रकट नहीं हुआ। कुपित राम ने समुद्र पर अपने अग्निबाण का प्रयोग किया तो सागर में अग्नि ज्वालाएं उठने लगीं। इस

के बाद जब ब्रह्मास्त्र भी चलाने के लिए तैयार हो रहे थे, तब प्रकट होकर समुद्र ने कहा - ''हे राम! इस प्रदेश में आप सेतु का निर्माण करें।'' सारे वानर शिलाओं को वहाँ जुटाने में लग गए। नल और नील नामक वानर शिल्पियों ने बड़ी कुशलता से समुद्र पर सेतु का निर्माण किया। उस सेतु पर चलते हुए राम-लक्ष्मण, सुग्रीव और पूरी वानर सेना ने समुद्र को पार किया और वे सब लंकापुरी पहुँचे।

बंदर को बंदी बनाओ :

नीतिशास्त्र में साम, दान, भेद और दण्ड़ोपाय नामक चार उपायों का उल्लेख किया गया है। दण्ड़ोपाय से पूर्व सामोपाय का प्रयोग करना चाहिए। अतः सुग्रीव ने अपने भतीजे अंगद को रावण के पास दूत बनाकर भेजा । अंगद रावण की सभा में प्रवेश कर उसे संबोधित करते हुए कहा - ''तुम मुझे नहीं पहचानते हो। किन्तु मेरे पिता वालि को भलीभांति जानते हो। एक बार उन्होंने तुम्हें अपनी बगल में दबाकर, चारों समुंदरों में डुबा-डुबाकर, अंत में ऐसे फेंका कि जाकर तुम लंका में गिर पड़े। उसी वालि का पुत्र हूँ मैं। मुझे अंगद कहते हैं । देवी सीता को लाकर श्रीराम को समर्पित कर दो। उनकी शरण में जाओगे सब ठीक हो जाएगा। श्रीरामचन्द्रजी के आदेशानुसार मैं तुम्हें यह संदेश पहुँचा रहा हूँ। तुम्हारा क्या कहना है बोलो।'' सुनते ही रावण आग बबूला हो गया और उसने ऊंचे स्वर में चिल्लाया - ''पकड़ो इस बन्दर को। पहले भी एक बन्दर ने आकर पूरे वन को उजाड़ डाला। यह बन्दर का बच्चा मुझे सीख सिखा रहा है। बन्दर को बन्दी बनाओ। तुरन्त रावण के सैनिकों ने अंगद को पकड़ने के लाख प्रयासों के बाद भी वह हाथ न लगा। अंगद ने एक छलांग मारी और रावण के मुकुट पर अपने पैर से प्रहार कर, सभा से

उड़ निकला। सुग्रीव आदि अपने लोगों के समक्ष उसने पूरी घटना सुनाई।

राम-लक्ष्मण को हमने बंदी बना दिया :

वानर और राक्षस सेनाओं के बीच भयंकर युद्ध आरंभ हुआ। दोनों दलों के प्रमुख वीरों की मृत्यु हो गई। युद्ध से दोनों दलों को क्षति ही पहुँचती है। रावण ने अपने ज्येष्ठ पुत्र मेघनाथ को रणभूमि में भेजा। वह बड़ा मायावी था। युद्ध में छल करते हुए उसने राम-लक्ष्मण को नाग पाशों से बन्दी बना दिया। बड़े आनंद के साथ पिता के समक्ष खड़े होकर उसने कहा - 'राम-लक्ष्मण और वानरों को मैं ने नागपाश से बन्दी बना लिया। अब वे कुछ नहीं कर सकते।' सुनकर रावण बड़ा प्रसन्न हुआ।

अब क्या हुआ :

फिर से वानरों का चिल्लाना सुनाई दिया। राम का धनुष, घनश्याम जैसे गरजने लगा। यह क्या हो रहा है? देखने के लिए रावण अपने भवन की अट्टालिका पर चढा। नागों का भक्षण कर, गरुड़जी वहाँ से गगन में उड़ते प्रकट हुए तो रावण अचंभे में पड़ गया। वह समझ गया कि गरुड़जी ने सारे लोगों को नाग पाशों के बन्धनों से मुक्त कर डाला। उसने तुरन्त कुंभकर्ण को जगाने के आदेश दिए। सैनिक उसके शरीर पर भालों को चुभाया। कानों में पानी डालकर, उसके विशाल शरीर पर कूदकर, बड़ी-बड़ी लाठियों से कुंभकर्ण पर प्रहार कर किसी प्रकार से उसे नींद से जगाया। कुंभकर्ण ने सैनिकों से पूछा - ''क्या बात है? मुझे क्यों जगाए? देव, दानव अथवा गंधर्वों ने हमारे भाई पर आक्रमण किया है क्या?'' सैनिकों ने उत्तर दिया कि अब की बार नर और वानरों ने लंका को घेर डाला । राम से तिरस्कृत तुम्हारे भाई को , रणभूमि से राज गृह लौटना पड़ा।

कुंभकर्ण ढेर हो गया :

कुंभकर्ण बहुत लंबा आकार का था। चलकर रणभूमि में आ रहे उसकी भयानक मूर्ति को देखकर वानर भयभीत हो गए। उन्हें लगा कि हमें मारने के लिए किसी कृत्रिम यंत्र को भेजा जा रहा है। सारे वानरों ने प्राण बचाने के लिए वहाँ से तुरन्त पलायन कर लिया। सामने जो दिखा, उसे निगलता कुंभकर्ण आगे बढता चला। हनुमानजी ने उसके शूल को तोड़ दिया। सुग्रीव को कुंभकर्ण अपनी बाजुओं में दबोचकर दौड़ता चला। सुग्रीव ने कुंभकर्ण के नाक को दाँतों से काटा। उसके कानों को खींचा, गुदगुदी लगायी और किसी प्रकार से अपने आप को छुड़ाकर वहाँ से भाग निकला। सुग्रीव, कुंभकर्ण के चंगुल से बचकर राम के पास पहुँचा। तब लक्ष्मण ने कुंभकर्ण का सामना किया। लक्ष्मण की वीरता की प्रशंसा कर, कुंभकर्ण ने उसे छोड़ा। राम पर लांघते कुंभकर्ण से विभीषण ने हितोक्ति कही कि - ''अपने अग्रज का साथ छोड़कर राम का साथ दो।'' विभीषण पर कटाक्ष करते हुए कुंभकर्ण ने कहा कि 'हमारे कुल का उद्धार करने के लिए तुम राम के पक्ष में मित्रता की। बस, मैं नहीं कर सकता यह काम।'' अपने सगे के वचन सुनकर विभीषण वहाँ से हट गया। तब कुंभकर्ण ड़ींग मारने लगा कि - ''मुझे मारना दूसरे राक्षसों को मारने जैसा कोई सरल काम नहीं। मैं तो तुम लोगों का अंत करने आया हूँ।'' राम ने तुरन्त उसके हाथ और पैरों का खंडन कर दिया। धड़ से सिर को अलग कर, धड़ को समुद्र में गिरा डाला।

घर का भेदी लंका ढावै :

अपने चाचा का मृत्यु समाचार सुनकर मायावी मेघनाथ, राम लक्ष्मण का संहार करने रणभूमि पहुँचा। उसके पास जाकर विभीषण ने

समझाने का प्रयत्न करते हुए कहा - ''हे मेघनाथ! तुम अपने आपको बल और शक्ति में असमान समझ रहे हो। किन्तु अब तक हम पराजित होते आ रहे हैं और आगे भी हमारा यही हाल होगा। इसमें कोई शंका नहीं। चूँकि निश्चित रूप से यही होने वाला है, कम से कम अब भी तुम श्रीरामचन्द्रजी के शरण में जा सकते हो। तुम्हारी रक्षा वे अवश्य करेंगे।''

मेघनाथ ने अवहेलना भरे स्वर में कहा - ''चाचा तुम जाकर विपक्ष में मिल गए। और अब मुझे भी आकर मिलने की सलाह देते हुए तुम्हें लज्जा नहीं आती? शत्रुओं के पक्ष में जाकर मिल जाना कितना बड़ा पाप है। शत्रुओं का साथ देकर घर को उजाड़ने वाले से बड़ा पापी क्या और कोई हो सकता है? तुम जैसे कापुरुष का मुख देखना भी सबसे बड़ा पाप है। जाओ। यहाँ से हट जाओ।'' विभीषण ने अनुभव किया कि बुरी बाते सबको अच्छी लगती है। हितोक्तियाँ किसी को अच्छी नहीं लगतीं।

इन्द्रास्त्र से मेघनाथ का वध :

इतने में लक्ष्मण ने इंद्रजित कहलाने वाले मेघनाथ को युद्ध के लिए ललकारा। मेघनाथ ने टाल दिया- ''मुझसे युद्ध करने वाले तुम नहीं, क्योंकि अभी तुम बहुत छोटे हो। जाकर अपने अग्रज को भेजो।'' अपने धनुष का टंकार करते हुए लक्ष्मण ने भी उत्तर दिया- ''ऐसे कई घमंड़ियों को हमने देख लिया है। पहले मुझसे युद्ध करो। सिंह के शावक के समान मैं तुम्हारे रुधिर को पी डालूंगा। तुम्हारा पिता मेरे भाई से युद्ध करेगा। तुम अभी मेरी ओर आओ।''

दोनों वीरो के बीच घमासान युद्ध हुआ। आरंभ में लग रहा था कि मेघनाथ विजयी होगा। लक्ष्मण की शक्ति क्षीण होती दिखी। मेघनाथ का सामना करना उसे कठिन होता गया। किन्तु थोड़े ही समय के पश्चात् मेघनाथ का बल घटने लगा और लक्ष्मण बलोपेत होता चला। जैसे ही

शक्ति घटती दिखी वैसे ही मेघनाथ अदृश्य होकर मेघों में छिप गया। क्रोधित लक्ष्मण ने अपने हाथ में इन्द्रास्त्र को लेकर प्रण किया कि 'अगर मेरे अग्रज राम, धर्म, सत्य का पालन करने वाले और असमान वीर हैं तो हे बाण ! जाकर उस रावण के पुत्र का संहार करो।' उस इन्द्रास्त्र ने मुकुट और कुंडलों से युक्त मेघनाथ के सिर को काटकर पृथ्वी पर गिरा डाला। मेघनाथ के मृत्यु समाचार को सुनकर रावण अत्यंत दुःखी हुआ। विलाप करती मेघनाथ की पत्नी सुलोचना ने अपने पति के सिर को हाथ में धरकर, अग्नि में अपने आपकी आहुति कर ली।

शक्ति निरर्थक हो जाए :

इंद्र पर विजयी होकर 'इंद्रजित' के नाम से विख्यात अपने लाड़ले पुत्र मेघनाथ का मृत्यु समाचार सुनकर दुःखी रावण, लक्ष्मण को समाप्त कर देने का प्रण करता हुआ, समर भूमि में पहुँचा। वहाँ उसने राम-लक्ष्मण के साथ विभीषण को देखा। डरावने दिख रहे रावण का सामना करने के लिए राम अपने धनुष और बाणों को लेकर आगे बढ़े। विरोधी वर्ग का साथ दे रहे अपने अनुज को देख कुपित रावण, 'इनसे पहले तुम्हारा वध करना चाहिए' कहते हुए शक्ति को विभीषण पर फेंका। विभीषण के आगे लक्ष्मण आकर खड़े हो जाने के कारण वह शक्ति लक्ष्मण की ओर आने लगी। अचानक राम के मुख से, ''लक्ष्मण कुशल रहे। रावण की शक्ति निरर्थक हो जाए'' शब्द निकले। उस शक्ति के लगते ही लक्ष्मण अचेत होकर गिर पड़ा। प्रसन्न होकर रावण वहाँ से निकल गया।

लक्ष्मण स्वस्थ हो गया :

इसे देख सारे वानर हाहाकर करने लगे। राम भी अधीर होकर विलाप करने लगे कि ''अगर मेरे भाई की मृत्यु हो जाए तो मैं क्या

करूँ? मैं कैसे सुखी रह सकता हूँ? हाथ से धनुष छूट रहा है। मुझे कुछ दिख नहीं रहा है। यह राजपाट किसके लिए? मेरे प्राणों की भी क्या आवश्यकता है? मुझे यह युद्ध क्यों करना है? बन्धु-बांधव अथवा पत्नी कहीं भी प्राप्त हो सकते हैं। किन्तु बाह्य प्राण जैसे भाई कहाँ मिलेगा?''

इतने में सुषेण नामक वैद्य ने आकर दाँढस बाँधा कि लक्ष्मण केवल मूर्छित है, उसकी मृत्यु नहीं हुई। संजीवनी बूटी से उसकी चेतनता वापस लाई जा सकती है। ओषधी पर्वत से संजीविनी बूटी लाने के लिए हनुमानजी को भेजा गया। हनुमानजी रात में उस बूटी को पहचान न सकने के कारण, पूरे ओषधी पर्वत को ही सामने लाकर रख दिए। उन औषधियों पर से आ रही वायु के बहते ही सारे मृतक वानर पुनर्जीवित हो गए। लक्ष्मण में भी चेतनता का संचार हुआ। सभी लोग आनंदित होकर हनुमानजी की प्रशंसा करने लगे।

रावण का वध :

शूर-वीर रावण फिर से युद्ध भूमि पहुँचा। वह रथ पर था और राम के पास कोई रथ नहीं था। इन्द्र ने मातली से राम के लिए रथ भेजा। उसमें राम के बैठते ही देवों ने पुष्प बरसाये। मनुजेश्वर और दनुजेश्वर के बीच घमासान युद्ध हुआ। गहराई में समुद्र की तुलना समुद्र से ही की जाती है। विस्तार में आकाश की तुलना आकाश से ही की जा सकती है। असमान शूरवीरों के युद्ध की तुलना उसी युद्ध से की जा सकती है। रावण के आग्नेयास्त्र को राम ने वारुणास्त्र से रोका। नागास्त्र का सामना गरुड़ास्त्र से किया गया। जीमूतास्त्र का विरोध करने के लिए वायव्यास्त्र को चलाया गया। तामिस्त्रास्त्र को वैकर्तनास्त्र से स्तंभित कर दिया गया। दानवास्त्र का वासवास्त्र से और वामदेवस्त्र को वासुदेवास्त्र से रोक दिया गया। राम को कुछ सूझ नहीं रहा था। इतने में वहाँ अगस्त्य महर्षि प्रकट

हुए। उन्होंने कहा कि 'आदित्य हृदय' नामक सूर्य के आराधना स्तोत्र को ''तीन बार पढ़कर युद्ध करोगे तो अवश्य विजय प्राप्त होगा।'' और उन्होंने इस मंत्र को उपदेशित किया ।

मातली से प्रेरित होकर राम ने ब्रह्मास्त्र का प्रयोग किया। प्रलयकाल के समय प्रज्वलित होने वाली अग्निज्वाला जैसे उस अस्त्र को देख रावण भयभीत हुआ और हाहाकार करते हुए उस अस्त्र के प्रभाव के कारण पृथ्वी पर गिर पड़ा। रावण के अंत होते ही लगातार देवदुंदुभियाँ बजने लगीं। अप्सरांगनाओं के नृत्यों से, गंधर्वों के मधुर गायन से और कल्पवृक्षों के सुमवर्षों से धरती और आकाश एक हो गए । सारे लोकों में आनंद छा गया।

अपने अग्रज के लिए विभीषण रो पड़ा। मंडोदरी तथा अंतःपुर की अन्य स्त्रियाँ रावण के पार्थिव शरीर को देखकर बिलख-बिलख कर रोने लगीं। राम ने विभीषण से रावण की अंत्येष्ठी एक राजा के योग्य पूरी मर्यादा के साथ संपन्न करवायी।

तत्पश्चात् श्रीराम ने विभीषण को लंका पुरी के राजा के रूप में मुकुट धारण करवाया। सारे लोग प्रसन्न हुए। देवी सीता श्रीरामचन्द्रजी के समक्ष उपस्थित हुई। श्रीराम ने उनकी ओर देखा तक नहीं तो सीता ने अग्नि प्रवेश कर लिया। अपने साथ लाकर अग्नि ने प्रमाणित किया कि सीता माता अत्यन्त पावन हैं।

प्रस्थान की बात सोच रहे राम से पुष्पकविमान के बारे में विभीषण ने बताया। राक्षस और वानरों के साथ सीता, राम और लक्ष्मण पुष्पक में अयोध्या पहुँचे। नंदिग्राम में उतरे। भरत और राम का मिलाप हुआ। माताओं के साथ-साथ अयोध्या की प्रजा को भी राम ने प्रमुदित किया।

एक शुभमुहूर्त पर सीता और राम का राज्याभिषेक दुगुने उत्साह के साथ संपन्न हुआ। श्रीरामचन्द्रजी ने अपने वानर और राक्षस मित्रों का यथोचित आदर-सत्कार किया। मित्रों के साथ-साथ सगे-संबंधी भी प्रसन्न चित्त होकर अपने-अपने आवास के लिए लौटे।

श्रीरामचन्द्रजी को माताओं के आशीर्वाद के साथ-साथ अनुजों का सहयोग भी प्राप्त हुआ। प्रजा ने सदा राजा का साथ दिया। इन सब पर गुरुओं का वरदहस्त भी रहा । इन सबके सहयोग और आशीर्वाद से श्रीरामचन्द्रजी, अनंतकाल तक शासन करने में सफल हुए। आज भी हम उनके शासनकाल को 'रामराज्य' के नाम से हमारा आदर्श मानते आ रहे हैं।

* * *